



Neutral Citation No. - 2026:AHC:169598

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

रिट-ए संख्या - 21378 वर्ष 2010

अशोक कुमार

.....याचिकाकर्ता(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

.....प्रतिवादी(गण)

याचिकाकर्ता(गण) के अधिवक्ता : धर्मेन्द्र प्रसाद, मधुप नारायण शुक्ल, एस. एन. यादव

प्रतिवादी(गण) के अधिवक्ता : मुख्य स्थायी अधिवक्ता

न्यायालय संख्या - 34

(एस.एन. 9)

माननीय न्यायमूर्ति अनीश कुमार गुप्ता,

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री मधुप नारायण शुक्ल तथा राज्य की ओर से विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता श्री राजीव गुप्ता को सुना गया।
2. वर्तमान याचिका याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 04.02.2009 को अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश को निरस्त किए जाने की प्रार्थना करते हुए दाखिल की गई है। उक्त आदेश द्वारा याचिकाकर्ता को सेवा से हटाने संबंधी दंडादेश को निरस्त कर दिया गया था। तथापि, अपीलीय प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोप संख्या 2 को सिद्ध पाए जाने के उपरांत, अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पारित सेवा से बर्खास्तगी के दंडादेश को निरस्त

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



करते हुए दंडादेश में परिवर्तन किया और दो वार्षिक वेतनवृद्धियां अस्थायी रूप से रोकने तथा निलंबन अवधि के याचिकाकर्ता के वेतन को रोकने का दंडादेश पारित किया। आक्षेपित दिनांक 04.02.2009 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता को दिए गए परिवर्तित दंड से क्षुब्ध होकर मूल याचिकाकर्ता द्वारा वर्तमान रिट याचिका दाखिल की गई। वर्तमान याचिका के लंबित रहने के दौरान मूल याचिकाकर्ता की वर्ष 2011 में मृत्यु हो गई और दिनांक 02.04.2006 के आदेश द्वारा मूल याचिकाकर्ता की पत्नी को वर्तमान याचिका में याचिकाकर्ता के रूप में प्रतिस्थापित किया गया।

3. संक्षेप में, मामले के तथ्य यह हैं कि यहां मूल याचिकाकर्ता जनपद बस्ती की तहसील हरैया में सहायक 'वासिल वाकी नवीस' के रूप में कार्यरत था और उसकी नियुक्ति दिनांक 26.06.1987 को श्रेणी-III के पद पर कर्मचारी लिपिक के रूप में हुई थी। इसके पश्चात् उसे अस्थायी रूप से लिपिक के पद पर पदोन्नत किया गया और तत्पश्चात् दिनांक 03.07.1988 को उसे लिपिक के पद पर स्थायी रूप से समाहित कर लिया गया। यहां याचिकाकर्ता को दिनांक 12.05.1999 को पेशकार के पद से स्थानांतरित करके जनपद बस्ती के अभिलेखागार में जमाबंदी अभिलेखपाल के पद पर तैनात किया गया। जब वह जमाबंदी अभिलेखपाल के पद पर तैनात था, तब दिनांक 30.01.2006 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता को निलंबित कर दिया गया और मूल याचिकाकर्ता के विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाही प्रारंभ की गई। दिनांक 23.06.2006 को मूल याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोप-पत्र जारी किया गया, जिसे उसने दिनांक 28.06.2006 को प्राप्त किया। याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाया गया प्रथम आरोप इस तथ्य से संबंधित था कि दिनांक 13.05.1999 से 02.09.2004 तक जमाबंदी अभिलेखपाल के पद पर तैनात रहते हुए उसने विभिन्न राजस्व अभिलेखों में ओवरराइटिंग, कूटरचना आदि करके अभिलेखों के साथ छेड़छाड़ की थी,

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



जिसका विवरण आरोप-पत्र में दिया गया है। याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाया गया एक अन्य आरोप यह था कि वह अपने कर्तव्यों के निर्वहन में लापरवाह रहा और उसने राजस्व अभिलेखों में की गई उक्त छेड़छाड़ को समुचित तत्परता के साथ संबंधित प्राधिकारी के संज्ञान में नहीं लाया। आरोप-पत्र प्राप्त होने के पश्चात् याचिकाकर्ता ने दिनांक 03.07.2006 को अपना उत्तर प्रस्तुत किया, जिसमें उसने अपने विरुद्ध लगाए गए दोनों आरोपों से इनकार किया। तत्पश्चात् तत्कालीन जांच अधिकारी ने दिनांक 04.08.2006 को जांच पूर्ण की और यह निष्कर्ष दिया कि आरोप संख्या 1 याचिकाकर्ता के विरुद्ध सिद्ध नहीं हुआ है, जबकि आरोप संख्या 2 याचिकाकर्ता के विरुद्ध आंशिक रूप से सिद्ध पाया गया।

4. इसके पश्चात्, जब जांच रिपोर्ट अनुशासनिक प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत की गई, तो अनुशासनिक प्राधिकारी ने जांच रिपोर्ट से संतुष्ट न होने के कारण मामले को आगे एक अन्य जांच अधिकारी को संदर्भित कर दिया। तत्पश्चात्, अन्य जांच अधिकारी ने दिनांक 28.12.2007 की जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की। इसी बीच, याचिकाकर्ता ने **रिट याचिका संख्या 10020 वर्ष 2008 (अशोक कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य)** दाखिल करके इस न्यायालय की शरण ली, जिसका दिनांक 26.02.2008 को निस्तारण किया गया। उक्त आदेश द्वारा निर्देश दिया गया कि याचिकाकर्ता द्वारा मांगे गए दस्तावेज उसे उपलब्ध कराए जाएं और उसके पश्चात् जांच पूर्ण की जाए। याचिकाकर्ता द्वारा इस न्यायालय के आदेश की प्रति प्रस्तुत किए जाने के दृष्टिगत, उसे सभी संबंधित दस्तावेजों का निरीक्षण करने की अनुमति दी गई और तत्पश्चात् याचिकाकर्ता ने दिनांक 19.05.2008 को अपना पूरक उत्तर प्रस्तुत किया। याचिकाकर्ता ने अनुरोध किया कि उसके द्वारा पूर्व में प्रस्तुत उत्तर को भी विचार में लिया जाए और याचिकाकर्ता ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि जहां तक अभिलेखों में की गई छेड़छाड़, कूटरचना, काट-छांट तथा ओवरराइटिंग के आरोपों का संबंध

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



है, उक्त कृत्य वर्ष 1995 से पूर्व कार्यरत विभागीय कर्मचारियों द्वारा किए गए थे; अतः उसके लिए उसे उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ता द्वारा पूर्व में प्रस्तुत उत्तर तथा उसके पश्चात् प्रस्तुत पूरक उत्तर, दोनों को विचार में लिया और तत्पश्चात् दिनांक 27.05.2008 को नए सिरे से जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की तथा याचिकाकर्ता के विरुद्ध दोनों आरोपों को सिद्ध पाया।

5. अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा प्राप्त उपर्युक्त जांच रिपोर्ट के आधार पर, दिनांक 15.05.2008 को याचिकाकर्ता को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता को व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने के लिए कहा गया, ताकि अनुशासनिक कार्यवाही में उसे सुना जा सके। इसके प्रत्युत्तर में याचिकाकर्ता ने दिनांक 07.07.2008 को अनुशासनिक प्राधिकारी को उत्तर प्रस्तुत करते हुए कहा कि चूंकि वह अस्वस्थ है, अतः उसे दिनांक 21.07.2008 तक का समय प्रदान किया जाए, ताकि वह उपस्थित होकर अपने आचरण के संबंध में स्पष्टीकरण प्रस्तुत कर सके। इसके पश्चात् अनुशासनिक प्राधिकारी ने उसे समय प्रदान किया; तथापि, इसके बाद ही दिनांक 15.07.2008 को अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा दंडादेश पारित कर दिया गया। अनुशासनिक प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता के विरुद्ध दोनों आरोपों को सिद्ध पाया और सेवा से बर्खास्तगी का दंडादेश पारित किया।
6. उक्त आदेश से क्षुब्ध होकर यहां याचिकाकर्ता ने अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष अपील दाखिल की। अपीलीय प्राधिकारी ने इस तथ्य का संज्ञान लिया कि अनुशासनिक प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 22.06.2008 तथा 06.07.2008 के पत्रों के माध्यम से किए गए अनुरोध पर विचार नहीं किया था। उक्त पत्रों द्वारा याचिकाकर्ता ने अनुशासनिक प्राधिकारी के समक्ष उपस्थित होने के लिए अतिरिक्त समय मांगा था, किंतु अनुशासनिक प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता के उक्त प्रार्थना-पत्र पर कोई आदेश पारित नहीं किया और सीधे

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



दिनांक 15.07.2008 को दंडादेश पारित कर दिया। इसके अतिरिक्त, अपीलीय प्राधिकारी ने यह पाया कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोप संख्या 1 सिद्ध नहीं हुआ था और केवल आरोप संख्या 2 ही याचिकाकर्ता के विरुद्ध सिद्ध पाया गया। फलतः, याचिकाकर्ता के विरुद्ध पारित दंडादेश में परिवर्तन किया गया और सेवा से बर्खास्तगी के स्थान पर दो वार्षिक वेतनवृद्धियां अस्थायी रूप से रोकने तथा निलंबन अवधि के लिए याचिकाकर्ता का वेतन रोकने का दंडादेश पारित किया गया। इससे क्षुब्ध होकर वर्तमान याचिका दाखिल की गई है।

7. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि अनुशासनिक कार्यवाही में याचिकाकर्ता को उत्तर दाखिल करने के लिए समय तो प्रदान किया गया था, किंतु याचिकाकर्ता का उत्तर प्राप्त होने के पश्चात् जांच अधिकारी ने जांच की कार्यवाही को पूर्ण करने के लिए तिथि, समय एवं स्थान निर्धारित करने में विफल रहा और तिथि, समय एवं स्थान निर्धारित किए बिना ही जांच की कार्यवाही एकपक्षीय रूप से पूर्ण कर दी गई, जबकि **उत्तर प्रदेश सरकारी सेवक (अनुशासन एवं अपील) नियमावली, 1999 के नियम-7** के अधीन तिथि, समय एवं स्थान निर्धारित करना अनिवार्य आवश्यकता है। अतः उपर्युक्त कारण से मूल याचिकाकर्ता के विरुद्ध संपूर्ण अनुशासनिक कार्यवाही प्रारंभ से ही त्रुटिपूर्ण थी। परिणामतः, याचिकाकर्ता के विरुद्ध कोई दंड अधिरोपित नहीं किया जा सकता। अपने कथन के समर्थन में याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय के **कप्तान सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, (रिट-ए संख्या 25240 वर्ष 2014)** दिनांक 14.05.2014 के निर्णय पर भरोसा किया है। इस न्यायालय की खंडपीठ ने वर्ष 1999 की नियमावली के नियम 7 पर विस्तार से विचार किया और निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया है:

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



“भले ही आरोपित कर्मचारी व्यक्तिगत सुनवाई की मांग न करे अथवा उन साक्षियों के नाम, जिनसे वह परीक्षण या प्रतिपरीक्षण करना चाहता है, उन बिंदुओं के संक्षिप्त सार सहित प्रस्तुत न करे, फिर भी जांच अधिकारी इस दायित्व से मुक्त नहीं होता कि वह आरोपित कर्मचारी को इसकी सूचना देते हुए जांच की तिथि निर्धारित करे। यदि वह निर्धारित तिथि को उपस्थित नहीं होता है, तो जांच अधिकारी, जैसा वह उचित समझे, जांच को किसी अन्य तिथि के लिए स्थगित कर सकता है अथवा एकपक्षीय रूप से जांच आगे बढ़ा सकता है। दोनों में से किसी भी स्थिति में, जांच अधिकारी के लिए जांच करना आवश्यक है—यदि आरोपित कर्मचारी उपस्थित है तो उसकी उपस्थिति में और यदि वह अनुपस्थित है तो एकपक्षीय रूप से। यदि आरोप-पत्र में मौखिक साक्ष्य का उल्लेख किया गया है, तो उस मौखिक साक्ष्य को अभिलिखित/परीक्षित किया जाना आवश्यक है। यदि मौखिक साक्ष्य का उल्लेख नहीं किया गया है, तब भी आरोपों के आलोक में दस्तावेजी साक्ष्य का परीक्षण किया जाना आवश्यक है, ताकि उनके संबंध में सत्यता का निर्धारण किया जा सके। आरोपित कर्मचारी को मौखिक जांच के लिए निर्धारित तिथि की सूचना दिए जाने का भी अधिकार है। उक्त मौखिक जांच में जांच अधिकारी को आरोपित कर्मचारी के समक्ष आरोपों तथा उनके समर्थन में उपलब्ध साक्ष्यों को प्रस्तुत करना चाहिए, उससे प्रासंगिक प्रश्न पूछने चाहिए तथा उसके संबंध में उसके उत्तर/प्रतिक्रिया प्राप्त करके उन्हें अभिलिखित करना चाहिए। ऐसी मौखिक जांच आवश्यक है, क्योंकि इससे आरोपित कर्मचारी को अपने आचरण का स्पष्टीकरण देने का अवसर मिलता है और जांच अधिकारी को विवाद का अधिक सम्यक् परिप्रेक्ष्य प्राप्त होता है। ऐसा इसलिए कि लिखित उत्तरों और दस्तावेजों से प्रत्येक स्थिति में सत्य का

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



पता लगाना संभव नहीं होता, क्योंकि वे आवश्यक रूप से संपूर्ण सत्य को व्यक्त नहीं कर सकते। यहां तक कि यदि आरोपित कर्मचारी दस्तावेजी साक्ष्य की सत्यता पर विवाद नहीं करता है, तब भी मौखिक जांच आवश्यक है, क्योंकि उसके पास फिर भी अपने आचरण के संबंध में कोई स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने के लिए हो सकता है।

“वर्ष 1999 की नियमावली में भी यह अपेक्षा की गई है कि जांच अधिकारी आरोपों की जांच करे, सिवाय उस स्थिति के जब आरोपित कर्मचारी आरोपों को स्वीकार कर ले-नियम 7(vi)। ऐसी स्थिति में जांच अधिकारी सीधे अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर सकता है। नियम 7 के उपनियम (iv) और (x) के अनुसार, यदि आरोपित कर्मचारी अपना लिखित कथन दाखिल नहीं करता है अथवा उपस्थित नहीं होता है, तो जांच अधिकारी एकपक्षीय रूप से कार्यवाही आगे बढ़ाएगा। जहां आरोपित कर्मचारी, जैसा कि वर्तमान मामले में है, अपना लिखित कथन दाखिल करता है और आरोपों से इनकार करता है, वहां कार्यवाही नियम 7(vii) तथा उसके पश्चात् के उपनियमों के अनुसार आगे बढ़ाई जाएगी।”

नियम 7 के उपनियम (iii) और (v) में “दस्तावेजी साक्ष्य” का उल्लेख स्पष्ट रूप से यह इंगित करता है कि उक्त दस्तावेजी साक्ष्य का भी, जैसा कि ऊपर उल्लिखित है, जांच के लिए निर्धारित तिथि को परीक्षण किया जाना आवश्यक है, चाहे वह आरोपित कर्मचारी की उपस्थिति में हो अथवा उसकी अनुपस्थिति में (एकपक्षीय रूप से)। यद्यपि यह आवश्यकता उपर्युक्त नियमों में स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त नहीं की गई है, तथापि वह उनमें अंतर्निहित है। इसी प्रकार मौखिक जांच किया जाना भी अंतर्निहित आवश्यकता है, क्योंकि बचाव का व्यक्तिगत अवसर प्रदान करने के लिए

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



यह अनिवार्य शर्त है और संविधान के अनुच्छेद 311 तथा अनुच्छेद 14 के अधीन प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का एक अंग है।

8. इस न्यायालय ने रिट-ए संख्या 27948 वर्ष 2010 (रामस्वरूप शुक्ल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य) में दिनांक 27.02.2026 को दिए गए निर्णय में निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया है:

“अतः, उपर्युक्त नियमों के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि यदि न तो आरोप-पत्र में और न ही आरोपित कर्मचारी द्वारा प्रस्तुत उत्तर में किसी साक्षी का प्रस्ताव किया गया है, तो जांच कार्यवाही समाप्त करने से पूर्व आरोपित कर्मचारी को किसी मौखिक जांच का अवसर प्रदान किए जाने के संबंध में उक्त नियमों में कोई स्पष्ट आवश्यकता निर्धारित नहीं की गई है। तथापि, कप्तान सिंह (उपर्युक्त) के मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ ने उपर्युक्त नियमों की व्याख्या करते हुए, रूप सिंह नेगी (उपर्युक्त) तथा खंडपीठ द्वारा जिन अन्य निर्णयों पर भरोसा किया गया था, उनमें प्रतिपादित विधि के सामान्य सिद्धांतों पर भरोसा करते हुए, उक्त नियमों की ऐसी व्याख्या की है कि आरोपित कर्मचारी द्वारा उत्तर प्रस्तुत किए जाने के पश्चात् अथवा आरोप-पत्र के प्रति आरोपित कर्मचारी द्वारा उत्तर प्रस्तुत न किए जाने की स्थिति में भी, उपर्युक्त नियमों में, यद्यपि स्पष्ट रूप से ऐसा नहीं कहा गया है, मौखिक जांच किए जाने की आवश्यकता अंतर्निहित है, क्योंकि बचाव का युक्तियुक्त अवसर प्रदान करने के लिए मौखिक जांच एक अनिवार्य शर्त है और यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 तथा 14 के अधीन प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का एक अंग है।

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



वर्तमान मामले में यह निर्विवाद है तथा अभिलेख एवं स्वयं जांच रिपोर्ट से भी यह स्पष्ट है कि यहां याचिकाकर्ता द्वारा आरोप-पत्र के प्रति अपना उत्तर प्रस्तुत किए जाने के पश्चात्, जांच अधिकारी द्वारा वर्तमान मामले में आगे की सुनवाई के लिए कभी भी कोई तिथि एवं समय निर्धारित नहीं किया गया और न ही याचिकाकर्ता को मौखिक सुनवाई का कोई अवसर प्रदान किया गया। कप्तान सिंह (उपर्युक्त) के मामले में प्रतिपादित उपर्युक्त बाध्यकारी न्यायिक दृष्टांत के आलोक में, जांच कार्यवाही समाप्त करने से पूर्व आरोपित कर्मचारी को सुनवाई का अवसर प्रदान करना जांच अधिकारी का अंतर्निहित दायित्व है। चूंकि वर्तमान मामले में याचिकाकर्ता को ऐसा अवसर कभी प्रदान नहीं किया गया, अतः आरोपित कर्मचारी को सुनवाई का ऐसा अवसर प्रदान किए बिना तैयार की गई जांच रिपोर्ट पर याचिकाकर्ता की सेवा समाप्ति के लिए भरोसा नहीं किया जा सकता। अतः याचिकाकर्ता के विरुद्ध की गई संपूर्ण कार्यवाही विधि की दृष्टि से दूषित हो जाती है। फलतः, अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश तथा अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश, दोनों ही विधि की दृष्टि में संधारणीय नहीं हैं।

8. इसके विपरीत, राज्य की ओर से विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि वर्ष 1999 की नियमावली के नियम-7 में ऐसी कोई आवश्यकता निर्धारित नहीं की गई है कि तिथि, समय एवं स्थान निर्धारित किया जाना आवश्यक है। वर्ष 1999 की नियमावली का नियम-7 इस संबंध में पूर्णतः मौन है। जब तक कि आरोप-पत्र अथवा आरोपित कर्मचारी द्वारा प्रस्तुत उत्तर में किसी भी पक्ष द्वारा किसी ऐसे साक्षी को परीक्षित किए जाने का प्रस्ताव न किया गया हो, जो साक्ष्य देने के लिए इच्छुक हो, तब तक तिथि,

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



समय एवं स्थान निर्धारित किए जाने की कोई आवश्यकता नहीं है। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि जब दोनों पक्षों द्वारा केवल दस्तावेजों पर भरोसा किया गया हो, तब जांच अधिकारी अपने समक्ष उपलब्ध दस्तावेजों के आधार पर जांच कार्यवाही समाप्त कर सकता है। अतः प्रतिवादी की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने वर्तमान याचिका को खारिज किए जाने की प्रार्थना की।

9. हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत किए गए परस्पर विरोधी तर्कों को सुना तथा अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेजों का परिशीलन किया। मामले के तथ्य ऊपर पूर्व में ही वर्णित किए जा चुके हैं।
10. तीनों जांच रिपोर्टों के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि जांच कार्यवाही समाप्त करने से पूर्व जांच अधिकारी द्वारा कोई तिथि, समय एवं स्थान निर्धारित नहीं किया गया तथा याचिकाकर्ता से उत्तर प्राप्त होने के पश्चात् सीधे ही जांच कार्यवाही समाप्त कर जांच रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी गई।
11. कप्तान सिंह (उपर्युक्त) तथा रामस्वरूप शुक्ल (उपर्युक्त) के मामलों में प्रतिपादित उपर्युक्त स्थापित विधि की स्थिति तथा वर्ष 1999 की नियमावली के नियम-7 के प्रावधानों के आलोक में, जांच अधिकारी के लिए यह अनिवार्य है कि जांच समाप्त करने से पूर्व तिथि, समय एवं स्थान निर्धारित करे, ताकि आरोपित कर्मचारी जांच कार्यवाही में अपने दस्तावेजों के संबंध में अपना पक्ष प्रस्तुत कर सके।
12. फलतः, अपीलीय प्राधिकारी द्वारा जिसे आंशिक रूप से बरकरार रखा गया है, वह दंडादेश याचिकाकर्ता के विरुद्ध विधि की दृष्टि में संधारणीय नहीं है। अतः बस्ती परिक्षेत्र, बस्ती के आयुक्त द्वारा पारित दिनांक 04.02.2009 के आक्षेपित आदेश को इस सीमा तक, अर्थात् याचिकाकर्ता के विरुद्ध दो वार्षिक वेतनवृद्धियां अस्थायी रूप से रोकने तथा निलंबन

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



अवधि के वेतन को रोकने संबंधी दंड अधिरोपित किए जाने की सीमा तक, एतद्वारा निरस्त एवं अपास्त किया जाता है।

13. फलतः, वर्तमान रिट याचिका **स्वीकार** की जाती है। याचिकाकर्ता विधि के अनुसार समस्त परिणामी लाभ प्राप्त करने का अधिकारी होगा। संबंधित प्राधिकारी द्वारा इस आदेश की प्रमाणित प्रति प्रस्तुत किए जाने की तिथि से आठ सप्ताह की अवधि के भीतर याचिकाकर्ता को उक्त समस्त परिणामी लाभ प्रदान किए जाएंगे।

(न्यायमूर्ति अनीश कुमार गुप्ता)

दिनांक: 12 अगस्त, 2026

एन. यू.

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और शासकीय उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”